भारत में राष्ट्रीय विकास बैंक की आवश्यकता क्यों ?

संदर्भ

भारत के वाणिज्यिक बैंक बेहद गंभीर वित्तीय तनाव का सामना कर रहे हैं जिसने भारतीय बैंकिंग प्रणाली को कमज़ोर बना दिया है। गैर-निष्पादित संपत्तियाँ (एनपीए), घोटाले और उनसे मिली बदनामी भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के लिये आम बात हो गई है। बैंकिंग क्षेत्र के प्रति अविश्वास लगातार बढ़ता जा रहा है क्योंकि नियम और कानून इन्हें रोकने में सफल नहीं हो पा रहे हैं। राष्ट्रीय बैंक की स्थापना करते हुए भारत को पुन: औद्योगिकीकृत करने और बैंकिंग क्षेत्र को तनावमुक्त करने का यही सही वक्त साबित हो सकता है।

भारतीय बैंकिंग क्षेत्र का घाटा: एनपीए की समस्या

- एनपीए या खराब ऋण (जो बैंकों को कोई आय या लाभ नहीं देते हैं) भारत में लगातार बढ़ रहे हैं। इसके कुछ हिस्से के लिये आरबीआई की आय-मान्यता और परिसंपत्ति वर्गीकरण मानदंडों के आधार पर कठोर संपत्ति गुणवत्ता समीक्षा ज़िम्मेदार है।
- समस्या कितनी बड़ी है: भारतीय रिज़र्व बैंक की वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट से पता चलता है कि सभी वाणिज्यिक बैंकों के लिये कुल परिसंपत्तियों के अनुपात के रूप में सकल एनपीए मार्च 2017 में 9.6% था और मार्च 2018 में अनुमानित एनपीए 10.8% था। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिये ये अनुपात क्रमशः 11.4% और 14.5% थे जो वाणिज्यिक बैंकों के मुकाबले कहीं ज़्यादा है।
- सार्वजनिक बैंकों की तुलना में निजी बैंक थोड़े बेहतर हैं लेकिन बैंकों का निजीकरण कर देना समाधान नहीं हो सकता है। इस समस्या को सुलझाने के लिये व्यवस्थित समाधान की आवश्यकता है।
- राजनीतिक आदेश पर कर्ज़ देना, बैंक प्रबंधकों का भ्रष्ट व्यवहार, जोखिम मूल्यांकन क्षमता की कमी और परिश्रमशीलता की कमी लगातार बढ़ रहे एनपीए के कुछ कारण हैं।
- इस एनपीए का बहुत बड़ा प्रतिशत कॉर्पोरेट (जबकि खुदरा या छोटे उधारकर्त्ताओं द्वारा भुगतान नहीं किया गया ऋण बहुत कम हैं) को दिया गया ऋण है। बैंकिंग प्रणाली का जान-बूझकर डिफॉल्टर्स द्वारा दुरुपयोग किया जा रहा है - मुख्य रूप से बड़े उधारकर्त्ताओं द्वारा, जिनके हाथों में व्यवस्था की डोर है।

वित्तीय विकास संस्थान (डीएफआई): क्या, क्यों?

- डीएफआई एक ऐसा संस्थान है जिसे मुख्य रूप से एक या एक से अधिक क्षेत्रों या अर्थव्यवस्था के उप-क्षेत्रों को विकास वित्त (development finance) प्रदान करने के लिये सरकार द्वारा बढ़ावा या सहायता दी जाती है।
- यह किसी भी निजी वित्तीय संस्थान और विकास संबंधी दायित्वों द्वारा अपनाए गए कार्यों के व्यावसायिक मानदंडों के बीच एक न्यायसंगत संतुलन के द्वारा खुद को अलग करता है।
- मूलतः ज़ोर दीर्घकालिक वित्त और अर्थव्यवस्था की उन गतिविधियों या क्षेत्रों की सहायता पर दिया जाता है, जहाँ जोखिम, किसी सामान्य वित्तीय प्रणाली द्वारा सहन किये जा रहे जोखिम से अधिक हो।
- विकास वित्त(development finance) के मुख्य कार्यभार वित्तीय बाज़ारों और संस्थानों के विफल होने पर कुछ आर्थिक एजेंटों को वित्त प्रदान करते हुए उनकी क्षतिपूर्ति करना है।
- विकास वित्त को विस्तारित करने हेतु प्रयुक्त साधन को वित्तीय विकास संस्थान (डीएफआई) या विकास बैंक कहा जाता है।
- डीएफआई ने महाद्वीपीय यूरोप के औद्योगिकीकरण में तेजी लाने में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1822 में नीदरलैंड में पहली सरकार-प्रायोजित डीएफआई की स्थापना हुई थी।
- एशिया में जापान विकास बैंक की स्थापना और अन्य सावधि-ऋण संस्थानों ने जापान के औद्योगिकीकरण को तेज़ी से बढ़ाया। अन्य जगहों पर डीएफआई की सफलता ने भारत में डीएफआई के निर्माण के लिये एक मजबूत प्रोत्साहन प्रदान किया है।

डीएफआई की उपयोगिता: भारतीय अनुभव

- जिन देशों का औद्योगीकरण देर से हुआ (जैसे भारत), उनमें विकास बैंकों ने हमेशा कॉर्पोरेट वित्त पोषण की भूमिका निभाई है। वे अविकसित विनिर्माण क्षेत्रों में नई फर्मों की निवेश आवश्यकताओं को पूरा करते हैं जिसे जोखिम ज़्यादा होने की वज़ह से पूंजी बाज़ार या वाणिज्यिक बैंकों द्वारा पूरा नहीं किया जाता है।
- 1950 में शुरू होने के बाद औद्योगीकरण के लिये इस मॉडल को न केवल एशिया और लातिन अमेरिका के कई अविकसित देशों द्वारा बल्कि जर्मनी तथा जापान द्वारा भी अपनाया गया था। भारत औद्योगीकरण शुरू करने के लिये विकास बैंकों के समकक्ष डीएफआई स्थापित करने में अग्रणी रहा।

इस प्रक्रिया में मुख्य रूप से तीन घटक थे:

♦ दीर्घकालिक ऋण संस्थान इंडस्ट्रियल फाइनेंस कारपोरेशन ऑफ इंडिया (आईएफसीआई, 1948 में स्थापित), इंडस्ट्रियल क्रेडिट एंड इंवेस्टमेंट कार्पोरेशन ऑफ इंडिया (आईसीआईसीआई, 1955 में स्थापित) और इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट बैंक ऑफ इंडिया (आईडीबीआई, 1964 में स्थापित) जो कि राष्ट्रव्यापी थे और रियायती शर्तों पर केंद्र सरकार और आरबीआई से प्राप्त वित्त द्वारा औद्योगिक क्षेत्रों में निजी निवेश के लिये दीर्घकालिक वित्त प्रदान करते थे।
♦ राज्य वित्तीय निगमों (एसएफसी) और राज्य औद्योगिक विकास निगमों (एसआईडीसी) की स्थापना 1950 के दशक में संबंधित राज्यों के विनिर्माण क्षेत्र में छोटे और मध्यम उद्यमों हेतु दीर्घकालिक वित्त प्रदान करने के लिये की गई थी।
♦ निवेश संस्थान: भारतीय जीवन बीमा निगम (एलआईसी, 1956), यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया (यूटीआई, 1964) और जनरल इंश्योरेंस कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया (जीआईसी, 1973)। इन संस्थानों ने बीमा के विचार को प्रचारित कर तथा लोगों की बचत पर उच्च रिटर्न देकर हर एक घर को बचत के लिये प्रेरित किया। वे सरकार द्वारा नियंत्रित औद्योगिक वित्त के सामर्थ्य स्रोत थे।

- दूरदर्शिता के साथ, यह कहा जा सकता है कि डीएफआई ने भारत में औद्योगिक वित्त के प्रावधान में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। विनिर्माण क्षेत्र में सकल नियत पूंजी उत्पत्ति का अनुपात 1970-71 में उनके कुल भुगतान के दसवें भाग से बढ़कर 2000-01 में आधा हो गया।
- डीएफआई का ऋण लगभग पूरी तरह से निजी क्षेत्र के लिये था। इसमें से कुछ हिस्सा विनिर्माण क्षेत्र की गतिविधियों को शुरू करने हेतु देना और उभरते हुए सेवा क्षेत्र को नवाचार ऋण की सहायता देना रणनीतिक उद्देश्य था।
- **डीएफआई की अपनी सीमाएँ थीं:** ऋण के लिये सावधानी जरुरी था। बुनियादी ढाँचे को उनके पोर्टफोलियो से बाहर रखा गया था। उनके ऋण और औद्योगिक उद्देश्यों के बीच कोई समन्वय नहीं था और आदेशात्मक कर्ज़ बुरे ऋण आदि का कारण बन गया।
- **डीएफआई का समय पूर्व बंद होना:** आईसीआईसीआई और आईडीबीआई को वाणिज्यिक बैंकों में बदल दिया गया था। एसएफसी और एसआईडीसी ने इस तरह के कर्जों को रोक दिया। निवेश संस्थानों के पास कभी भी औपचारिक शासनादेश नहीं था, और एलआईसी को छोड़कर इस तरह के उधार वापस ले लिये गए।
- 2000 के दशक के आरंभ में विकास बैंकों का रफ्तार में कमी विकासशील देशों (ब्राजील, चीन, कोरिया जैसे अपवादों के साथ) में बढ़ती प्रवृत्ति के अनुरूप थी, सरकारों द्वारा रियायती वित्त की क्रमिक निकासी उपलब्ध करवा दी गई।
- 2000 और 2010 के बीच, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में विकास बैंकों के बकाया ऋणों में भारत में 7.4% से 0.8% तक की गिरावट आई, लेकिन ब्राज़ील में ये 6.4% से 9.7% और चीन में 6.2% से 11.2% तक बढ़ गए।
- इन सभी समस्याओं के बावजूद डीएफआई को बंद करना एक गलती थी क्योंकि वाणिज्यिक बैंक इस काम के लिए तैयार नहीं थे। 2000 में डीएफआई सुस्त पड़ने लगे और अंततः 2005 में बंद हो गए।

वित्तीय विकास संस्थानों (डीएफआई) बनाम वाणिज्यिक बैंकों का अनुभव

- डीएफआई ने 2000 की शुरुआत तक विनिर्माण या सेवा क्षेत्र में निवेश के लिये कॉर्पोरेट संस्थाओं को काफी कर्ज दिया था। डीएफआई के बंद होने के बाद वाणिज्यिक बैंकों से कर्ज लेना कॉर्पोरेट वित्तपोषण के एक महत्त्वपूर्ण वैकल्पिक स्रोत के रूप में उभरा।
- वाणिज्यिक बैंकों में दीर्घकालिक निवेश ऋण पर क्रेडिट जोखिम का आकलन करने की क्षमता नहीं थी क्योंकि वे हमेशा अल्पकालिक कार्यशील पूंजी को आगे बढ़ाने में अभ्यस्त रहे हैं।
- वाणिज्यिक बैंकों में परिपक्वता विसंगति भी थी क्योंकि उन्होंने जमाकर्त्ताओं से कम अवधि के लिये उधार लिया लेकिन निवेशकों को लंबी अवधि के लिये कर्ज़ दे दिया।

भारत में एक नए राष्ट्रीय विकास बैंक (एनडीबी) की आवश्यकता

- भारत में डीएफआई के अनुभव से सबक लेते हुए एनडीबी की एक नई संस्था की नए सिरे से शुरुआत की जाएगी।
- इसमें नियंत्रण और संतुलन होना चाहिये ताकि सरकार तथा फर्मों के बीच मिलीभगत को रोकते हुए प्रेरित कर्ज़ को रोका जा सके।
- इस बीच बैंकिंग में खराब ऋण को रोकने के लिये कम-से-कम पाँच उपायों की आवश्यकता है-

♦ शीर्ष बैंक अधिकारीयों के चयन और नियुक्ति में सुधार,
♦ परियोजना के मूल्यांकन के लिये वरिष्ठ कर्मचारियों का कौशल उन्नयन और प्रशिक्षण,
♦ सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों (पीएसबी) में सतर्कता को मजबूत करना,
♦ निर्धारित समय-सीमा के अंदर जाँच और
♦ बैंक बोर्डों में सरकार द्वारा नियुक्त नौकरशाहों की जवाबदेही और आरबीआई द्वारा निगरानी को बढ़ाना।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/why-india-needs-national-development-bank